रिपोर्टेबल

भारत का सर्वोच्च न्यायालय

सिविल अपीली अधिकारिता

सिविल अपील संख्या4104/ 2007

राजस्थान राज्य पथ परिवहन निगम और अन्य ... अपीलार्थीगण

बनाम

बजरंग लाल ... प्रत्यर्थी

सेवा कानून: सेवा से बर्खास्तगी - पैसे का गबन - प्रत्यर्थी-कर्मचारी दैनिक आधार पर ट्रेनी कंडक्टर के रूप में कार्यरत, बिना टिकट यात्रियों को ले जाते पाया गया - आरोप पत्र दायर किया गया - जांच अधिकारी ने उसके खिलाफ आरोप साबित पाया - अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने सेवा से हटाने की सजा का आदेश पारित किया - हटाने के आदेश को चुनौती देने वाले वाद की डिक्री की गयी और कर्मचारी के इस आरोप को स्वीकार करते हुए कि पूछताछ में उसके सामने गवाहों के बयान दर्ज नहीं किए गए थे; कि उसे निगम द्वारा पेश किए गए गवाहों से जिरह करने का अवसर नहीं दिया गया; कि उसे दस्तावेजों की प्रतियाँ प्रदान

नहीं की गई थीं और सजा की मात्रा पर सुनवाई नहीं हुई थी - प्रथम अपीलीय अदालत और उच्च न्यायालय द्वारा निगम की अपील खारिज कर दी गई थी - यह अभिनिर्धारित किया गया: विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष केवल वाद-पत्र में कर्मचारी द्वारा लगाए गये आरोपों और निगम की ओर से इसका खंडन न करने पर आधारित थे, हालांकि विचारण न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह देखते हुए मामले को आगे बढ़ाया था कि मुद्दे को साबित करने का भार कर्मचारी पर था न कि निगम पर- कोई विशिष्ट अभिवचन नहीं था यह दलील देना कि जांच अधिकारी द्वारा भरोसा किए गए कौन से दस्तावेज कर्मचारी को नहीं दिए गए या किस गवाह को उसके द्वारा जिरह की अनुमति नहीं दी गई - इसके अलावा विचारण न्यायालय ने जांच रिपोर्ट या उसकी सामग्री का कोई संदर्भ नहीं दिया- पूरा मामला ईप्से डिक्सीट पर आधारित था - उच्च न्यायालय ने दूसरी अपील में इस मुद्दे की जांच करने से इनकार कर दिया कि केवल यह देखते हुए कि कानून का कोई महत्वपूर्ण प्रश्न शामिल नहीं था और तथ्यों के निष्कर्ष, भले ही गलत हो, दूसरी अपील में छेड़छाड़ नहीं की जा सकती - उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया निष्कर्ष त्रुटिपूर्ण था क्योंकि द्वितीय अपील, असाधारण परिस्थितियों में, तथ्य के विशुद्ध प्रश्नों पर ग्रहण की जा सकती है - सजा के प्रश्न के संबंध में; भ्रष्टाचार से जुड़े मामलों में, बर्खास्तगी के अलावा कोई अन्य सजा नहीं हो सकती है - इस तरह के मामलों में

दिखाई जाने वाली कोई भी सहानुभूति पूरी तरह से अवांछित है और जनहित के खिलाफ है - दुर्विनियोजित राशि छोटी या बड़ी हो सकती है; दुर्विनियोजन का कार्य प्रासंगिक है - बर्खास्तगी के आदेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

अभिवचन: अभिनिर्धारित किया गया: किसी पक्षकार को मामले का अभिवचन करना है और वादपत्र में दिये गए तर्कों को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत/ पेश करना है और यदि अभिवचन पूर्ण नहीं होते हैं तो न्यायालय अभिवचनों को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908: धारा 100 - अभिनिर्धारित किया गया: तथ्य के प्रश्न पर भी जहाँ तथ्यात्मक निष्कर्ष अनुचित पाए जाते हैं, द्वितीय अपील पर विचार करने के लिए उच्च न्यायालय के लिए कोई प्रतिषेध नहीं है।

आदेश

डॉ. बी.एस. चौहान, न्यायधीश

1. यह अपील राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम (इसके पश्चात् 'निगम'के रूप मे संदर्भित) द्वारा राजस्थान उच्च न्यायालय, खंडपीठ जयपुर द्वारा दिनांक 8.11.2005 को एस.बी. सिविल द्वितीय अपील संख्या 449/2003 मे पारित निर्णय और आदेश, जिसमे अपर जिला न्यायाधीश, जयपुर द्वारा सिविल नियमित अपील संख्या 119/2002

दिनांकित 28.1.2003 के निर्णय और डिक्री को कायम रखा गया था, के विरुद्ध की गई है। जिसके तहत, इसने सिविल वाद संख्या 1346/1988 में अपर सिविल जज (जूनियर डिवीजन) संख्या 2, जयपुर द्वारा पारित निर्णय और डिक्री दिनांकित 30.11.1994 की पुष्टि की है।

2. इस अपील को जन्म देने वाले तथ्य और परिस्थितियां इस प्रकार है:

क. प्रत्यर्थी को दैनिक आधार पर एक प्रशिक्षु कंडक्टर के रूप में काम करते समय कुछ यात्रियों को बिना टिकट ले जाते हुए पाया गया और, इस प्रकार, उसके खिलाफ एक जांच शुरू की गई। उस पर दो आरोप पत्र, दिनांकित 11.3.1988, तामील किए गए थे। पहले आरोप पत्र में, यह आरोप लगाया गया था कि 24.2.1988 को जब वह कोटा-राजपुरा के रास्ते में ड्यूटी पर था, तब उसकी बस की जांच की गई, तो यह पाया गया कि 10 यात्री बिना टिकट यात्रा कर रहे थे, हालांकि उसने उनमें से प्रत्येक से किराया लिया था। दूसरे आरोप पत्र में, यह आरोप लगाया गया था कि जब वह कोटा-नीमच मार्ग पर ड्यूटी पर था, तो उसकी बस की जांच की गई और उसे दो यात्रियों को कम राशि के टिकट पर यात्रा कराते हुए पाया गया, हालांकि, उसने उनसे पूरा किराया लिया था। प्रत्यर्थी ने कथित आरोप-पत्रों का अलग से जवाब प्रस्तुत किया जो संतोषजनक नहीं पाया गया। इसलिए, मामले की जांच के लिए जांच अधिकारी की नियुक्ति की गई और नियमित जांच शुरू की

गई।जांच के समापन के बाद, जांच अधिकारी ने यह कहते हुए रिपोर्ट प्रस्तुत की कि दोनों आरोप-पत्रों में प्रत्यर्थी के खिलाफ लगाए गए आरोप उसके खिलाफ साबित हुए।

ख. रिपोर्ट पर विचार करने के बाद अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने दिनांक 5.8.1988 के आदेश द्वारा सेवा से हटाने की सजा का आदेश पारित किया। प्रत्यर्थी ने हटाए जाने के आदेश को चुनौती देते हुए 2.9.1988 को एक सिविल वाद दायर किया, यह आरोप लगाते हुए कि उसे आरोप-पत्रों में उल्लिखित दस्तावेज, जांच रिपोर्ट, और अन्य दस्तावेज उपलब्ध नहीं कराये गये। इसके अलावा, सजा की मात्रा सिद्ध अपराध के अनुपात मे नहीं थी।

ग. अपीलार्थियों द्वारा वाद में किए गए सभी प्रकथनों को अस्वीकार करते हुए चुनौती दी गई थी। तथापि, विचारण की समाप्ति पर, वाद पर दिनांक 30.11.1994 के निर्णय और डिक्री द्वारा डिक्री की गई थी।

घ. असंतुष्ट होकर, निगम ने सिविल नियमित अपील संख्या 119/2002 दायर की, जो दिनांक 28.1.2003 के निर्णय और डिक्री द्वारा खारिज कर दी गई।

ड़. निगम ने नियमित द्वितीय अपील संख्या 449/2003 दायर करके उपरोक्त दोनों निर्णयों को चुनौती दी, जो कि आक्षेपित निर्णय और डिक्री द्वारा खारिज कर दिया गया।

इसलिए, यह अपील प्रस्तुत की गई।

3. श्री एस. के. भट्टाचार्य, अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि नीचे के किसी भी न्यायालय ने मामले की सही परिप्रेक्ष्य में जांच नहीं की है। अपीलार्थियों द्वारा यह दृष्टिकोण अपनाया गया कि वाद स्वयं चलाए जाने योग्य नहीं था, क्योंकि प्रत्यर्थी के लिए एकमात्र उपचार औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (इसके बाद 'अधिनियम 1947'के रूप में संदर्भित) के तहत श्रम न्यायालय में जाना था, जिसकी नीचे के न्यायालयों द्वारा उचित रूप से जांच नहीं की गई है। इसके अलावा, वादपत्र में अभिवचन अस्पष्ट थे। प्रत्यर्थी/वादी वादपत्र में किए गए किसी भी आरोप को साबित करने में विफल रहे हैं, इसलिए, नीचे की अदालतों ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की है कि वैधानिक प्रावधानों और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन के कारण जांच निष्फल हो गई थी। जांच कानून के अनुसार सख्ती से की गई थी, स्थायी आदेश की धारा 35 के प्रावधानों का पूरी तरह से अनुपालन किया गया है और प्रत्यर्थी को अपना बचाव करने का पूरा अवसर दिया गया था। इसलिए, इस संबंध में नीचे की अदालतों द्वारा दर्ज तथ्य के निष्कर्ष अनुचित हैं। प्रतिवादी को निगम के धन का गबन करते हुए पाया गया और बर्खास्तगी की सजा साबित अपराध से अधिक नहीं ठहराया जा सकता है। इसलिए, अपील को अनुमति दी जानी चाहिए।

4. इसके विपरीत, श्री अनीस अहमद खान, प्रत्यर्थी की ओर से पेश हुए विद्वान अधिवक्ता, ने अपील का विरोध करते हुए तर्क दिया है कि तीनों न्यायालयों द्वारा दर्ज तथ्यों के एक ही निष्कर्ष हैं। निचली अदालत के साथ-साथ प्रथम अपील न्यायालय ने इस तथ्य के निष्कर्षों को दर्ज किया है कि जांच कानून के अनुसार नहीं की गई थी और सेवा से बर्खास्तगी की सजा साबित अपराध के अनुपात में नहीं थी। इसलिए इसमें किसी तरह के हस्तक्षेप की जरूरत नहीं है।

5. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख का अवलोकन किया है।

6. निःसंदेह, अपीलार्थी निगम ने अभिवचन की पोषणीयता के संबंध में इस आधार पर अभिवाक लिया था कि प्रत्यर्थी को एक कर्मकार होने के नाते अधिनियम, 1947 के अधीन उपलब्ध मंच पर पहुंचना चाहिए था और सिविल वाद चलाने योग्य नहीं था। इस दलील को मजबूती देने के लिए श्री भट्टाचार्य ने इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया है, जिनमे शामिल हैं - **प्रीमियर ऑटोमोबाइल्स लिमिटेड बनाम बंबई के कमलेकर शांताराम वडके व अन्य**, एआईआर 1975 एससी 2238; **उत्तम दास चेला सुंदर दास बनाम शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर**, एआईआर 1996 एससी 2133; **राजस्थान एसआरटीसी व अन्य बनाम मोहर सिंह**, एआईआर 2008 एससी 2553; **राजस्थान एसआरटीसी और अन्य बनाम बाल मुकुंद बैर**वा, (2009) 4 एससीसी

299; और **राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम और अन्य बनाम दीन दयाल शर्मा**, एआईआर 2010 एससी 2662, और जोर दिया है कि नीचे की अदालतों के फैसले अधिकार क्षेत्र से बाहर हैं।

7. चाहे जो भी हो, निचली अदालत के समक्ष, अपीलार्थियों ने मुकदमे की पोषणीयता के मुद्दे पर जोर नहीं दिया, भले ही इस संबंध में मुद्दा विशेष रूप से तैयार किया गया हो। इस प्रकार, हम इस विवाद की गहराई में जाने के बिल्कुल भी इच्छुक नहीं हैं।

8. वादपत्र का सुसंगत भाग इस प्रकार हैः

> "कि वादी पर आरोप पत्र संख्या 1158 दिनांकित 11.3.88 के अनुसार दिनांक 24.2.88 को कोटा-राजपुरा मार्ग पर उसके वाहन की जांच की गयी तो निरीक्षण के दौरान पाया गया कि वह 10 यात्रियों को बिना टिकट ले जा रहा था एवं अन्य आरोप पत्र संख्या 1159 दिनांकित 11.3.88 को इस कथन के साथ आरोपित किया गया था कि दिनांक 27.11.88 को परिवादी को कोटा-नीरनच मार्ग पर परिचालक की हैसियत से ड्यूटी देने के दौरान 2 यात्रियों को बिना टिकट ले जाते पाया गया तथा टिकट की रकम में अंतर के मामले में भी वह पकड़ा गया था। कि यदि समय पर बस की जाँच नहीं की जाती तो

वादी बिना टिकट पाये गये यात्रियों से वसूल किये गये समस्त धन को अपने निजी उपयोग में ले लेता। जबकि निगम के नियमों और शर्तों के अनुसार वादी को सभी यात्रियों को टिकट जारी करने और फिर उसे वे-बिल में दर्ज करने की आवश्यकता होती है और उसके बाद ही वाहन को रवाना किया जाना चाहिए था। उपर्युक्त आरोप पूरी तरह से गलत और आधारहीन थे।"

9. अपीलार्थी/ प्रतिवादी ने अपने लिखित कथन में मूल रूप से कहाः

"प्रतिवादियों ने जवाब में उल्लेख किया है कि वादी को दैनिक वेतन के आधार पर कंडक्टर के पद पर नियुक्त किया गया था। वादी दिनांक 7.12.85 से नियमित वेतनमान का वेतन प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है क्योंकि वादी को दैनिक वेतन भोगी के रूप में नियुक्त किया गया था और कानून के अनुसार वेतन वादी को दिया गया था।

जांच के दौरान वादी को बचाव और सुनवाई का पूरा अवसर दिया गया। जांच पूरी होने के बाद जांच रिपोर्ट की प्रति वादी को दी गई और उन्हें जांच के परिणाम से भी अवगत कराया गया। इस प्रकार वादी

के विरुद्ध प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का कोई उल्लंघन नहीं किया गया जबकि स्थायी आदेशों की धारा 35 के प्रावधानों का पूर्णतया पालन किया गया। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने पूरी तरह से दिमाग लगाकर वादी की बर्खास्तगी का आदेश पारित किया था। वादी ने अपने जोखिम पर न्यायालय शुल्क पेश किया है। प्रतिवादी निगम 'उद्योग'की परिभाषा के भीतर आता है और जिसके लिए केवल माननीय औद्योगिक न्यायाधिकरण को इस तरह के मामले की सुनवाई और निर्णय करने का अधिकार क्षेत्र मिला है। वादी प्रतिवादियों से मौद्रिक लाभ और अन्य पारिणामिक लाभ प्राप्त करने का हकदार नहीं है। इसलिए, वादी के वाद को लागत के साथ खारिज किया जाये।"

10. अभिलेख पर सामग्री का मूल्यांकन करने के बाद, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित कियाः

"इस तरह से वादी ने वादपत्र में स्पष्ट रूप से आरोप लगाया है कि जांच में गवाह का बयान वादी के सामने दर्ज नहीं किया गया था। उसे प्रतिवादी

निगम द्वारा पेश किए गए गवाहों से जिरह करने का अवसर नहीं दिया गया और न ही उसे अपने मामले का बचाव करने और साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर दिया गया। यह कि उसे दस्तावेजों की प्रतियां उपलब्ध नहीं कराई गईं और सजा की मात्रा पर उनकी बात नहीं सुनी गई और उसने शपथ पत्र के माध्यम से अभिसाक्ष्य दिया। इसका खंडन करने के लिए प्रतिवादियों ने अभिसाक्ष्य के रूप में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है और न ही इसके समर्थन में कोई अन्य दस्तावेज पेश किया गया है। **इन परिस्थितियों में, वादी के साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। चूंकि वादी के खिलाफ जो जांच शुरू की गई है वह प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के खिलाफ है, इन परिस्थितियों में, बर्खास्तगी काजो आदेश पारित किया गया है वह भी कानून के खिलाफ है।** इसलिए, यह वाद विवाद वादी के पक्ष में और प्रतिवादियों के खिलाफ तय किया जाता है।"

11. विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए उपरोक्त निष्कर्ष केवल वाद पत्र में प्रत्यर्थी द्वारा लगाए गए **आरोपों** और निगम/ प्रतिवादी द्वारा इसका खंडन करने में विफल रहने पर आधारित हैं, हालांकि

विचारण न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह देखते हुए मामले को आगे बढ़ाया था कि इस मुद्दे को साबित करने का बोझ अधिकार प्रत्यर्थी/वादी पर था न कि निगम/प्रतिवादी पर। ऐसी तथ्यात्मक स्थिति में, निचली विचारण न्यायालय ने अपने निष्कर्ष के समर्थन में कोई तर्क नहीं दिया है। न तो कोई विशिष्ट अभिवचन है कि उसे कौन सा दस्तावेज प्रदान नहीं किया गया था, जिस पर जांच अधिकारी ने भरोसा किया हो या किस गवाह को उसके द्वारा जिरह करने की अनुमति नहीं दी गई थी।विचारण न्यायालय ने जांच रिपोर्ट या उसकी अन्तर्वस्तु का कोई संदर्भ नहीं दिया। यह पूरा मामला इप्से डिक्सीट पर आधारित है।

12. विधि की स्थापित प्रतिपादना है कि किसी पक्षकार को मामले का अभिवचन करना है और वादपत्र में दिये गए तर्कों को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत/ पेश करना है और यदि अभिवचन पूर्ण नहीं होते हैं तो न्यायालय अभिवचनों को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है। (देखें : **मैसर्स लार्सन एंड टुब्रो लिमिटेड और अन्य बनाम गुजरात राज्य और अन्य**, एआईआर 1998 एससी 1608; **राष्ट्रीय भवन निर्माण निगम बनाम एस. रघुनाथन व अन्य**, एआईआर 1998 एससी 2779; **राम नारायण अरोड़ा बनाम आशा रानी व अन्य**, (1999) 1 एससीसी 141; **श्रीमती चित्रा कुमारी बनाम भारत संघ व अन्य**, एआईआर 2001 एससी 1237; और **यूपी राज्य बनाम चंद्र प्रकाश पांडे**, एआईआर 2001 एससी 1298)

13. **मैसर्स अतुल कास्टिंग लिमिटेड बनाम बावा गुरबचन सिंह**, एआईआर 2001 एससी 1684 में इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया:-

> *"आवश्यक अभिवचनों और सहायक साक्ष्यों की अनुपस्थिति में निष्कर्षों को कानून में बरकरार नहीं रखा जा सकता है।"*

(यह भी देखें: **विट्ठल एन. शेट्टी व अन्य बनाम प्रकाश एन. रुद्रकर व अन्य**, (2003) 1 एससीसी 18; **एलआरएस द्वारा देवसहायम (मृत) बनाम पी. सविथ्रम्मा व अन्य**, (2005) 7 एससीसी 653; **सैट नागजी पुरुषोत्तम एंड कंपनी लिमिटेड बनाम विमलाबाई प्रभुलाल व अन्य**, (2005) 8 एससीसी 252, **राजस्थान प्रदेश वी.एस. सरदारशहर व अन्य बनाम भारत संघ व अन्य**, एआईआर 2010 एससी 2221; **रितेश तिवारी व अन्य बनाम यूपी राज्य व अन्य**, एआईआर 2010 एससी 3823; और **भारत संघ बनाम इब्राहिम उद्दीन व अन्य**(2012) 8 एससीसी 148)

14. इसलिए, एक बार जब विचारण न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि साक्ष्य का भार प्रत्यर्थी/ वादी पर था, तो यह पूर्वोक्त निष्कर्षों पर नहीं पहुंच सकता था क्योंकि यह दिखाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि प्रत्यर्थी द्वारा किए गए प्रकथन/ आरोप कैसे साबित हुए।

15. यहां तक कि प्रथम अपील न्यायालय द्वारा भी मुद्दे पर विचार करते समय स्वयं को गलत दिशा में ले जाया गया जैसा कि अभिनिर्धारित किया थाः

> "कि प्रतिवादियों/अपीलार्थियों द्वारा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था। वादी द्वारा किया गया कथन अखंडित है। कि वादी के बयान के अनुसार गवाहों के बयान वादी के सामने दर्ज नहीं किये गए थे। वादी को प्रतिवादियों/ अपीलार्थियों द्वारा पेश किए गए गवाहों की प्रतिपरीक्षा करने का अवसर नहीं दिया गया। वादी को साक्ष्यों को साबित करने और अपने मामले का बचाव करने का अवसर नहीं दिया गया। दस्तावेजों की प्रतियां वादी को उपलब्ध नहीं कराई गयी थी। सजा की मात्रा पर भी उनका पक्ष नहीं सुना गया। इस प्रकार वादी द्वारा दिये गये अभिसाक्ष्य का खंडन नहीं किया जाता है और उसके अखण्डनीय होने के कारण यह कहा जा सकता है कि वादी के विरुद्ध कोई विभागीय जाँच प्रारम्भ नहीं की गयी। विभागीय जांच न करने के कारण वादी के विरुद्ध की गई कार्यवाही प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के अनुरूप नहीं थी। बर्खास्तगी का आदेश

जो बिना जांच के पारित किया गया है, उसे कानून के अनुसार पारित नहीं कहा जा सकता है। इस प्रकार वाद संख्या 1 के संबंध में विद्वान अधीनस्थ न्यायालय द्वारा निकाला गया निष्कर्ष न्यायोचित एवं उचित है तथा इसमें हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं है।"

16. अपीली न्यायालय ने जांच को गैर-निष्पादित घोषित करके एक गंभीर त्रुटि की। उसके परिणामस्वरूप बर्खास्तगी का आदेश निष्फल साबित हुआ, हालांकि किसी भी तात्विक तथ्य का कोई संदर्भ नहीं है जिसके आधार पर इस तरह का निष्कर्ष निकाला गया था। यह निष्कर्ष कि दस्तावेजों की प्रति प्रत्यर्थी/ वादी को नहीं दी गई थी, हालांकि यह दिखाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि दस्तावेजों पर कैसे भरोसा किया गया था और वे कैसे शामिल विवाद के लिए प्रासंगिक थे, क्या उन दस्तावेजों पर जांच अधिकारी द्वारा भरोसा किया गया था और उन दस्तावेजों की आपूर्ति न होने से कैसे कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था, इसलिए यह बिना किसी आधार या साक्ष्य के है। जब द्वितीय अपील में मामला उच्च न्यायालय में पहुंचा, तो उच्च न्यायालय ने केवल यह देखते हुए इस मुद्दे की जांच करने से इनकार कर दिया कि कानून का कोई महत्वपूर्ण प्रश्न शामिल नहीं था और तथ्य के निष्कर्ष, चाहे कितने भी गलत हों, द्वितीय अपील में छेड़छाड़ नहीं की जा सकती।

17. पूरे सम्मान के साथ, हम उच्च न्यायालय द्वारा किए गए ऐसे निष्कर्ष से सहमत नहीं हैं, क्योंकि अपवादात्मक परिस्थितियों में, तथ्य के शुद्ध प्रश्नों पर द्वितीय अपील पर विचार किया जा सकता है। तथ्य के प्रश्न पर भी जहाँ तथ्यात्मक निष्कर्ष अनुचित पाए जाते हैं, द्वितीय अपील पर विचार करने के लिए उच्च न्यायालय के लिए कोई प्रतिषेध नहीं है।

18. **इब्राहिम उद्दीन**(पूर्वोक्त) वाले मामले में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित कियाः

> *"65. सुवालाल छोगालाल बनाम सीआईटी, (1949) 17 आईटीआर 269 (नाग) में न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित कियाः (आईटीआर पृष्ठ 277)*
>
> *"... एक तथ्य तथ्य है, चाहे वह किसी भीसाक्ष्य द्वारा साबित किया गया हो। ऐसे मामले में केवल एक बार कानून का सवाल तब पैदा हो सकता है जब यह आरोप लगाया जाता है कि ऐसी कोई सामग्री नहीं है या पर्याप्त सामग्री नहीं है जिसके आधार पर निष्कर्ष निकाला जा सके ।*
>
> *67. तथ्य के प्रश्न पर भी दूसरी अपील पर विचार करने का कोई प्रतिषेध नहीं है बशर्ते न्यायालय इस*

बात से संतुष्ट हो जाए कि निचले न्यायालयों के निष्कर्षों को प्रासंगिक साक्ष्यों पर विचार न करने से निष्फल किया गया था या मामले के प्रति गलत दृष्टिकोण दिखा कर और नीचे के न्यायालय में अभिलिखित निष्कर्ष अनुचित हैं। [देखे - जगदीश सिंह बनाम नत्थू सिंह, एआईआर 1992 एससी 1604, प्रतिभा देवी बनाम टी. वी. कृष्णन, (1999) 5 एससीसी 353, सत्य गुप्ता बनाम बृजेश कुमार, (1998) 6 एससीसी 423, राघवेंद्र कुमार बनाम फर्म प्रेम मशीनरी एंड कंपनी, एआईआर 2000 एससी 534, मोलर मल बनाम के आयरन वर्क्स (पी) लिमिटेड, एआईआर 2000 एससी 1261, भारत माता बनाम आर. विजया रेंगनाथन, (2010)11 एससीसी 483 और दिनेश कुमार बनाम यूसुफ अली, (2010) 12 एससीसी 740]

68. जय सिंह बनाम शकुंतला, एआईआर 2002 एससी 1428 में, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि (एससीसी पृष्ठ 638, पैरा 6) तथ्य के प्रश्न पर भी हस्तक्षेप करना अनुज्ञेय है लेकिन यह केवल "बहुत ही असाधारण मामलों में

और अत्यधिक अनुचित पर हो सकता है कि इसकी विस्तार से जांच करने का प्राधिकार इस प्रकार अनुज्ञेय है- यह नियमितता के बजाय एक दुर्लभता है और इस प्रकार अंत में यह सुरक्षित रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जब इस तरह का कोई प्रतिषेध नहीं है, लेकिन जांच करने की शक्ति केवल बहुत ही असाधारण परिस्थितियों में और उचित सावधानी पर ही हो सकती है।"

कश्मीर सिंह बनाम हरनाम सिंह, एआईआर 2008 एससी 1749 में समान दृष्टिकोण अपनाया गया है।"

19. जहां तक अनुपातहीन दंड के प्रश्न का संबंध है, मुद्दा अब अछूता नहीं है। **यू. पी. राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम सुरेश चंद शर्मा**, (2010) 6 एससीसी 555 में यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गयाः

"22. नगरपालिका समिति, बहादुरगढ़ बनाम कृष्णन बिहारी, एआईआर 1996 एससी 1249 में, इस न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित कियाः (एससीसी पृष्ठ 715, अनुच्छेद 4)

"4. ... इस तरह के मामले में- वास्तव में, भ्रष्टाचार से जुड़े मामलों में- बर्खास्तगी के अलावा कोई अन्य सजा नहीं हो सकती है। इस तरह के

मामलों में दिखाई जाने वाली कोई भी सहानुभूति पूरी तरह से अवांछित है और जनहित के खिलाफ है। दुर्विनियोजित राशि छोटी या बड़ी हो सकती है; दुर्विनियोजन का कार्य प्रासंगिक है।"

इसी प्रकार के विचार को इस न्यायालय द्वारा रस्टन एंड हॉर्न्सबाई (आई) लिमिटेड बनाम टी. बी. कदम, एआईआर 1975 एससी 2025, यू. पी. एसआरटीसी बनाम बासुदेव चौधरी, (1997) 11 एससीसी 370, जनता बाजार (दक्षिण कनारा सेंट्रल कॉप. होलसेल स्टोर्स लिमिटेड) बनाम सहकारी नौकर संघ, (2000) 7 एससीसी 517, कर्नाटक एसआरटीसी बनाम बी. एस. हुल्लीकट्टी, एआईआर2001 एससी 930 और राजस्थान एसआरटीसी बनाम घनश्याम शर्मा, (2002) 10 एससीसी 330 में दोहराया गया है।

20. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थी कर्मचारी की ओर से उठाया गया यह प्रतिविरोध कि सेवा से हटाए जाने का दंड अपराध से असंगत है, यह बात स्वीकार करने योग्य नहीं है। भ्रष्टाचार साबित होने के मामले में एकमात्र सजा सेवा से बर्खास्तगी है।

21. इसके परिणामस्वरूप, अपील सफल होती है और इसे स्वीकार किया जाता है। निचली अदालतों के फैसलों को निरस्त किया जाता है और अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा सेवा से हटाने का आदेश बहाल कर दिया जाता है। लागत संबन्धित कोई आदेश नहीं किया जाता है।

न्यायाधीश

(डॉ. बी. एस. चौहान)

न्यायाधीश

(जे. चेलमेश्वर)

नई दिल्ली;

14 मार्च, 2014

(यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल **'सुवास'**के जरिए अनुवादक की सहायता से किया गया है।)

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।